ओझल दुनिया का नुमाया होना

युवान एविस के साथ फज़ल रशीद की बातचीत

यूवान एविस हिन्दुस्तान के जाने-माने लेखक, शिक्षाविद् और एक्टिविस्ट हैं। उनकी किताब *Intertidal: A Coast & Marsh Diary* चेन्नई के समुद्र-तटीय ईकोसिस्टम की कहानी बताती है। इस किताब में उन्होंने चेन्नई की सुमद्र तटीय ज़मीन और आसपास के दलदली और कछारी इलाकों पर गहरी नज़र डाली। यूवान के लिखने में सबसे अव्वल हमारे और हमारे इर्द-गिर्द की 'गैर-इन्सानी हस्तियों' के बारीक रिश्तों की तस्वीर निकलती है। वो अपने लेखन से हमें दोबारा प्रकृति के ताने-बाने में पिरो देते हैं और हमें याद दिलाते हैं कि महज़ जीने के लिए बाकी जीवों पर हम कितने निर्भर हैं। इस किताब को सन् 2024 में एक महत्वपूर्ण पुरस्कार मिला।

इत्तिफाक से पिछले साल ग्वालियर में मैं और यूवान मिले और हमारी गुफ्तगू हुई। हमारी बात इधर-उधर घूमती हुई अलग-अलग विषयों को छूती है। उनकी अगली किताब, कीड़े-मकोड़ों का दुनिया में मकाम, और आखिर आज के दौर में नेचर राइटिंग की अहमियत, पर केन्द्रित है। यही सवालिया बातचीत जिसमें युवान मेरे सवालों का जवाब देंगे, आपके लिए नीचे पेश है।

सवाल: तो यूवान, एक बुनियादी सवाल से शुरू करते हैं। आप कीड़े-मकोड़ों के बारे में क्यों लिखने लगे? इसकी शुरुआत कैसे हुई? आम तौर पर लोग कीड़े-मकोड़ों को नज़रअन्दाज़ ही नहीं करते बल्कि उनको अक्सर मारते हैं।

जवाब: जब मैं पन्द्रह या सोलह साल का था, मुझे एहसास होने लगा कि मुझे लिखना है। और मुझे याद है कि जब मैं एम. कृष्णन या रंजीत लाल या रॉबर्ट मॅकफार्लेन को पढ़ता था तो सिर्फ इस पढ़ने से मेरे लिए एक पूरी नई दुनिया खुल जाती थी। लिखना एक ऐसी गतिविधि है जो किसी

• *Godrej Literature Live Non-fiction Book of the Year Award, 2024*

असम्भव चीज़ के होने को मुमकिन बना सकती है। खास तौर से नेचर राइटिंग में, आप एक जगह के बारे में लिखते हैं जहाँ लोग बहुत बार जा चुके हैं। उसमें आप एक-दो नए नज़रिए डाल देते हैं और फौरन उस जगह का अनुभव बिलकुल बदल जाता है। चुनांचे, मुझे लिखना एक सम्भावनाशील गतिविधि लगती है, जो ओझल को ज़ाहिर बना सकती है और बेज़बान को आवाज़ दे सकती है। मेरे लिए यह लिखने की सबसे दिलचस्प बातों में से है। यही मुझे लिखने की ओर आकर्षित करती है। चाहे कीड़े-मकोड़े हों, या जानवर हों, या लैंडस्केप हो।

सवाल: हाँ, पढ़ने-लिखने से हमारी कल्पना विस्तृत हो सकती है, शायद ज़बानी कहानी सुनने से भी ज़्यादा। कोई बोलते हुए कितनी तफसील में जा सकता है। लिखने से हम अपने बेतरतीब एहसासों पर विचार करके उनको नए सिरे से ढाल सकते हैं।

जवाब: मैं यह नहीं कह रहा कि और तरह की अभिव्यक्ति लिखने से कमतर है। रूबरू हाज़िर होकर कहानी कहने और सुनने का अपना मज़ा है। लेकिन, लिखने से सरल खयालों को विस्तार दिया जा सकता है, और इनको फैलाकर पेचीदा भी बनाया जा सकता है।

सवाल: तो आप यह कह रहे हैं कि आपको इन बेज़बान हस्तियों की कहानियाँ सुनानी थीं?

जवाब: बेज़बान या शायद जिनकी आवाज़ नकार दी गई है। मसलन, मेरी नई किताब *Intertidal...* चेन्नई की बुनयादी प्राकृतिक प्रक्रियाओं के बारे में है, जैसे तटीय बहाव (यह समुद्र तट के किनारे तलछट के परिवहन की प्रक्रिया है, जो लहरों और हवाओं की गति से प्रभावित होती है) या तट के समानान्तर बहने वाली धाराएँ, जो हमारी नज़रों के ठीक सामने होती हैं, लेकिन हमें उनकी कोई कदर नहीं होती। ये प्रक्रियाएँ किसी भी तटीय शहर के जीवन के हर पहलू को तय करती हैं और ऐसा कोई दिन नहीं होता जब हम इनसे मुतासिर नहीं होते। लेकिन ये पूरी तरह से हमारे रोज़मर्रा के जीवन से गायब हैं। क्या आपने कभी सोचा है, हमारे रेतीले तट कैसे बनते हैं? नदियाँ अपने साथ गाद लेकर आती हैं। तट के समानान्तर बहने वाली धाराएँ इस गाद को फैलाकर रेतीले तट बनाती हैं। ये धाराएँ रेतीले तटों को हमेशा थोड़ा-थोड़ा खिसकाती रहती हैं। ये रेतीले तट भी 'मध्यम बहने वाली नदियों' जैसे होते हैं। चुनांचे, मैं सिर्फ जीव-जन्तुओं के बारे में नहीं लिखता, भूदृश्य में लगातार हो रही ज़िन्दा हलचलों को दर्ज़ करने की भी कोशिश करता हूँ।

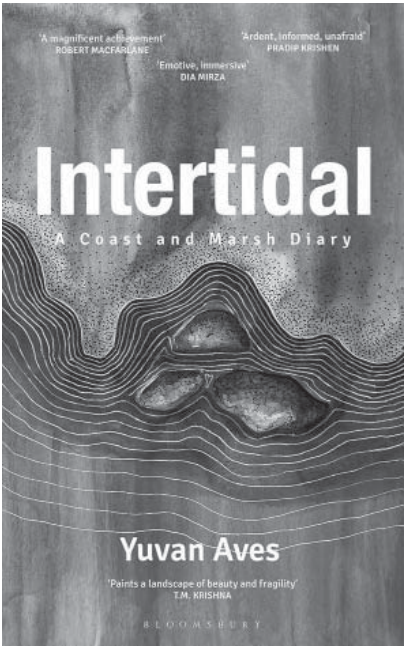

सवाल: ठीक है, वापिस कीड़े-मकोड़ों पर आते हैं। यह विषय बड़ा 'हट-के' है। आपने कीड़े-मकोड़ों के बारे में सीखना कैसे शुरू किया? आम तौर पर ये नज़रों से छुपे रहते हैं। बमुश्किल दिमाग में कैद होते हैं। कीड़े-मकोड़ों का जीवन बड़ा ओझल-सा होता है, वो दिखते ही गायब हो जाते हैं। उनको तफ्सील से देखना दुश्वार होता है। तो आपने इन पुर-पेच हस्तियों के बारे में जानना कहाँ से शुरू किया?

जवाब: लोगों का कीड़ों की दुनिया में दाखिला अमूमन तितलियों के ज़रिए होता है। मेरा भी ऐसे ही हुआ था। जब मैं 18-19 साल का था, तो तितलियों और उनकी दुनिया पर फिदा हो गया। मैं उनके बारे में सब कुछ जानना चाहता था। वो अचानक क्यों दिखती हैं और फिर कहाँ चली जाती हैं। वो कब आती हैं और कब जाती हैं। उनका पसन्दीदा घर और उनके 'मेज़बान पौधे' कौन-से होते हैं। चुनांचे, मैं उनके बारे में सब कुछ जानना चाहता था। यह मेरे लिए एक तिलिस्मी एहसास था। प्राचीन यूनानी या वैदिक वर्गीकरण प्रणाली में कीड़े-मकोड़े जीवजगत के सबसे निचले पायदान पर माने जाते हैं। इस वर्गीकरण में आदमी सबसे ऊपर, फिर स्तनपाई, और फिर सबसे नीचे पेड़-पौधे होते हैं। चलते-फिरते जीवों में कीड़े सबसे नीचे होते हैं, महज़ वनस्पति के ऊपर। लेकिन कीड़ों के जीवन का तिलिस्म हमसे पोशीदा बना रहता है। अलबत्ता जब आप उनपर गौर करने लगते हैं, तो आपको उनकी दुनिया की झलक मिलने लगती है।

बस, देखिए तितलियों की दुनिया कितनी रंगीन और चमकदार होती है। उनके पास तकरीबन 16,000 सूँघने के रिसेप्टर होते हैं! और इन्सान के पास सिर्फ 400 होते हैं! हमसे कितना गुना ज़्यादा महसूस करना सम्भव होगा उनके लिए। अब अगर हम इतनी सारी बूओं का हिसाब करें, तो वो

दर्ज़े में हमसे कितने ऊपर हो जाएँगे। इसीलिए मैं इनकी तरफ आकर्षित हुआ चूँकि इनके ज़रिए हमारी आँखों के सामने बिलकुल ही अलग एहसास की खिड़कियाँ खुल सकती हैं और महाब्रह्माण का रहस्य यहीं धरती पर मिल सकता है। सिर्फ गौर से देखने और सुनने से आपको इस 'एकाधिक-दुनिया' यानी 'यूनिवर्स' बरक्स 'मल्टीवर्स' की एक झिलमिल झलक मिल सकती है।

तो पहले मैंने तितलियों के बारे में सीखा और फिर व्याध पतंगों या हेलीकॉप्टर (ड्रैगनफ्लाई) के बारे में। मैं परागण करने वाले कीड़े-मकोड़ों को बहुत पसन्द करता हूँ क्योंकि वो हमारे लिए एक बेहद बुनियादी काम करते हैं। इसी की वजह से हम जी पाए और इन्सान बनकर विकसित हो पाए। लेकिन हमारी साधारण समझ में इस तथ्य की कोई जगह नहीं है। यूरोप में खतरनाक नियोनिकोटिनोइड (neonicotinoid) कीटनाशक पर रोक लगी हुई है। इनपर रोक लगवाने दस लाख लोग जमा हुए और उन्होंने मुहिम चलाई। लेकिन हमारे यहाँ फिलहाल इस पर किसी का ध्यान नहीं है। जी हाँ, कीड़े-मकोड़े हमारे लिए निहायत ज़रूरी हैं लेकिन हम इनको बिलकुल बेमतलब समझते हैं।

सवाल: तो ये कीटनाशक अभी भी यहाँ इस्तेमाल होते हैं?

जवाब: जी हाँ, बिलकुल। अभी-भी बहुत सारे नियोनिकोटिनोइड कीटनाशक बहुत इस्तेमाल हो रहे हैं। बल्कि मज़े की बात तो यह है कि यूरोपीय कृषि रसायन उद्योग यहाँ हिन्दुस्तान आकर इनको बेचता है। Thiamethoxam, Imida, Roflid — ये तीन अक्सर मिलते हैं। यहाँ हालात बहुत बुरे हैं और सच पूछो तो मधुमक्खी या ततैया के हक के लिए आवाज़ कभी-न-कभी उठानी होगी।

सवाल: अच्छा फर्ज़ करें, मुझे या किसी और को, तितलियों और ड्रैगनफ्लाई के बारे में सीखना हो, तो आप हमें क्या सलाह देंगे? आप कीड़े-मकोड़ों के साथ बहुत सारा वक्त बिताते हैं, आप उनके बेहद करीब जाकर बहुत बारीकी से देखते हैं और उनके जीवन को समझते हैं। साथ ही, आपका लेखन वैज्ञानिक सोच से भी बहुत प्रभावित होता है। तो हम जैसे नए लोग इन रहस्यमई जीवों के बारे में सीखना कैसे शुरू करें?

जवाब: ऐसा है कि अच्छे किस्से लोगों को दिलकश लगते हैं। कहानियाँ तो काल्पनिक होती हैं। वास्तविक जीवन में कहानियाँ शामिल नहीं होतीं। हकीकी ज़िन्दगी में सब कुछ बेतरतीब और बिखरा-बिखरा होता है। कहानियाँ इस बिखराव को सिलसिलेवार बना देती हैं। वो मुक्तलिफ

घटनाओं को ऐसे जोड़ती हैं कि उनमें मानी पैदा हो जाए। तो आप लिखते हुए बेतरतीब वास्तविकताओं को ऐसे दायरे में लाकर पिरोते हैं कि वो पुरकशिश कहानियाँ बन जाएँ। मिसाल के तौर पर, जब मैं बच्चों को कीड़े-मकोड़ों के बारे में बताने सैर पर ले जाता हूँ, तो मैं किस्से-कहानियों से तैयारी करता हूँ। जैसे, इस जगह पर यह कहानी सुनाऊँगा, उस जगह पर वो कहानी सुनाऊँगा, वगैरह-वगैरह। कुछ कहानियाँ बच्चों को अच्छी लगेंगी, और कुछ शायद उनको न भाएँ। प्रकृति में दिलचस्पी बढ़ाने के लिए कहानियाँ एक ज़ोरदार औज़ार हैं। मेरी कोशिश है कि अच्छी, मानीखेज़ कहानियों के नज़रिए से लोग दुनिया को देखें और समझें। जो कहानियाँ हमने सुनी हैं, उन्हीं के हिसाब से हम किसी चीज़ को 'बेहतर' या 'कमतर', या 'अच्छा' या 'बुरा' करार देते हैं। हम इस 'कहानी-करण' या कहानी बनने की प्रक्रिया से हकीकत को समझते हैं, उसमें शामिल होते हैं और शिरकत करते हैं। इन्हीं पुरानी कहानियों को नए अन्दाज़ में कहकर पुराने दिमागी ढाँचों को अलग करके हम इस धरती की कहानी में बाकी जीवों को अपना सह-भागी बना सकते हैं। तो आखिर आपके सवाल का जवाब दे ही देता हूँ। कीड़ों की कहानियों के ज़रिए आप उनके बारे में सीखना शुरू कर सकते हैं।

सवाल: इतने सारे कीड़ों के इतने सारे नाम! क्या सबके नाम जानना ज़रूरी है?

जवाब: जी, नाम जानना अहमियत रखता है। जब हम किसी चीज़ का नाम जानते हैं तो वो खूँटे की तरह दिमाग में कस जाता है। आजकल इस पर काफी बहस चल रही है। लेकिन सिर्फ नाम जानने पर हम रुक नहीं सकते। अगर आप किसी चीज़ का नाम नहीं जानते तो उसपर अपनी नज़र डालना और उसको बाकी दुनिया की बेतरतीबी से अलग करना बहुत मुश्किल हो जाता है। मगर हम यहाँ रुक नहीं सकते। किसी कीड़े को पहचानने के बाद हम उसका और भी गहरा अध्ययन कर सकते हैं। चूँकि मैं टीचर हूँ, मैं हमेशा यह करने की कोशिश करता हूँ। हम वो कौन-कौन सी चीज़ें कर सकते हैं जिनसे प्रकृति से हमारा तार जुड़ जाए। मैं इस चीज़ के बारे में मुसलसल सोचता रहता हूँ। बल्कि कुछ मिथक भी हमें इन्सानी कल्पना में कीड़े-मकोड़ों का मकाम बताते हैं। तो ये कुछ रास्ते हैं जिनसे हम कीड़े-मकोड़ों की दुनिया में दाखिल हो सकते हैं।

सवाल: मैं कुछ लोगों को जानता हूँ जो प्रकृति प्रेमी हैं और बहुत संवेदनशील हैं, लेकिन वे फिर भी कीड़ों से डरते हैं, या उन्हें घिन आती है। इसका क्या किया जा सकता है?

जवाब: कुछ ही दिन पहले मैं अज़ीम प्रेमजी यूनिवर्सिटी के बैंगलोर कैम्पस में था। हम चट्टानोंवाली मधुमक्खी के कुछ बड़े-बड़े छत्ते देख रहे थे। हम उनकी अलग-अलग गतिविधियों की बातें कर रहे थे। वो कैसे छत्ते बनाती हैं और कैसे एक-दूसरे को रासायनिक सन्देश देती हैं। फिर हमने रुककर सबसे पूछा कि आपको क्या एहसास होता है जब आप कीड़ों के बारे में सोचते हैं। किसी ने कहा कि कीड़ा मतलब चींटी। किसी ने कहा कि कीड़ा मतलब कॉकरोच। किसी और ने कहा कि कीड़ा मतलब कुछ खूबसूरत चीज़ जैसे तितली या जुगनू। ज़्यादातर हम जब कीड़ों के बारे में सोचते हैं तो लोगों को डर, घिन और दहशत महसूस होती है। हमने इसके बारे में बातचीत की और मैंने उनसे पूछा, "क्या आपने सोचा है कि आपको यह एहसास क्यों होते है? क्या आप मधुमक्खी के डंक का शिकार हुए हैं? नहीं। तो फिर आप क्यों डर रहे हैं?"

इन भावनाओं को जाँचना, उनके पीछे के कारण को समझना बहुत ज़रूरी है क्योंकि यही मालूम होता है कि ये सारा कुछ सामाजिक सोच का नतीजा है, यानी हमारे समाज ने इसे गढ़ा है और हमें यह सब डर-नफरत सिखाई है। फिर हम विद्यार्थियों के साथ सैर के दौरान इन मधुमक्खियों की कहानियों को दोबारा सुनते हैं। हम देखते हैं कि वे कैसे अपने खाने को खोजती हैं। वो अपना 'वैगल नृत्य' कैसे करती हैं। 'वैगल नृत्य' के ज़रिए मधुमक्खियाँ एक-दूसरे के साथ बहुत कुछ जानकारी साझा करती हैं, जैसे खाना कितनी दूर मिलेगा, कैसे बुज़ुर्ग मधुमक्खी पंचायत बिठाकर फैसला लेती हैं कि कब और कहाँ प्रवास करना है, और नया छत्ता कहाँ बनाना है आदि। ये सब बहुत लोकतांत्रिक तरीके से किया जाता है। थॉमस सीली ने अपनी किताब *मधुमक्खी का लोकतंत्र (Honeybee Democracy)* में इसके बारे में लिखा है।

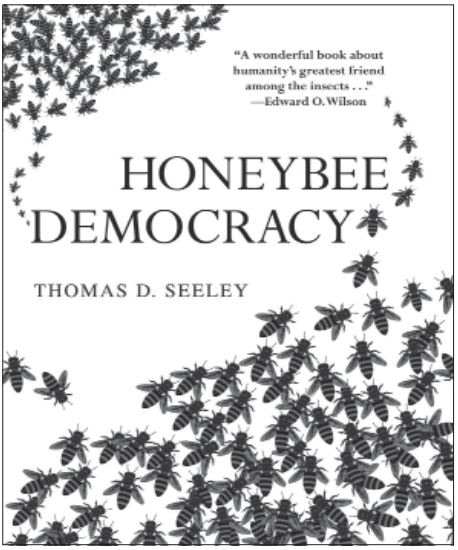

अपनी 'नेचर वॉक्स' या सैर

के ज़रिए हम मधुमक्खियों की कहानी का 'पुनःनिर्माण' करते हैं और दोबारा समझते हैं कि ये हमारी ज़िन्दगी में क्या मायने रखती हैं। आखिर, मैं ग्रुप से पूछता हूँ, "अब आपको इनके प्रति क्या महसूस होता है?" अक्सर वे जवाब देते हैं कि "अब मुझे इनके बारे में जिज्ञासा या दिलचस्पी हो रही है।" एक बच्चे ने कहा कि अब उसको इनके प्रति आभार महसूस होता है क्योंकि उनकी मदद से ही हमारा खाना पैदा होता है। सैर खत्म होते-होते बच्चों की भावनाएँ बदल जाती हैं। तो अब आपके सवाल पर वापिस आते हैं। लोगों को कीड़ों से घिन लगती है क्योंकि यह सब महज़ इन्सानों के बनाए नज़रिए हैं। यानी सामाजिक निर्माण हैं जिन्हें तोड़ा और फिर नए सिरे से गढ़ा जा सकता है।

सवाल: क्या आपको मधुमक्खियों और उनके पराग को फैलाने (परागण) के बारे में कोई किस्से-कहानियाँ मिली हैं?

जवाब: जी हाँ, लेकिन इस पर बहुत कम बातचीत होती है। 'ब्रह्मारी' नाम की एक देवी होती है जो अब हिन्दू धर्म के देवी-देवताओं का हिस्सा बना दी गई है। यह देवी एक मधुमक्खी का रूप लेती है और इससे अच्छी फसल का वरदान मिलता है। यहाँ मधुमक्खियों की अहमियत की एक झलक मिलती है। पहले से ही हर ज़मीन से जुड़े समाज को साफ मालूम रहा है कि ये पिद्दी-सी हस्तियाँ हमारे लिए बहुत ज़रूरी काम करती हैं। लेकिन हमें आज के आधुनिक दौर के लिए भी कहानियाँ चाहिएँ। मैं सौ साल पुरानी कहानियाँ अब नहीं सुना सकता। बिलकुल नहीं। मुझे तो *महाभारत* भी – ज़्यादा-से-ज़्यादा – अप्रचलित लगती है। इसके साथ-साथ कुछ बहुत अच्छे प्रयोग किए गए हैं जिनमें छोटे-छोटे बच्चे – जो सिर्फ तीन-चार महीने के होंगे – मकड़ियों या साँप को पकड़कर उनसे खेल रहे हैं। आजकल इंस्टाग्राम पर ऐसी बहुत सारी रील बन रही हैं। चुनांचे, यह कोई पैदाइशी या आनुवंशिक स्थिति नहीं है। ये हमारी आदतों और रीति-रिवाज़ से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती आ रही हैं। कोई भी बच्चा मकड़ियों के डर को लेकर पैदा नहीं होता। एक वीडियो में एक छोटे-से बच्चे के सामने एक बड़ा-सा तरनतुला मकड़ा (जो दुनिया के सबसे ज़हरीले होते हैं) रखा जाता है और वो फौरन उसको पकड़ने लपकता है। बताइए, कीड़ों के प्रति भय में 'अरकनोफोबिआ' या मकड़ियों का खासा भय सबसे ज़्यादा देखने मिलता है। अब इसकी ज़हनी रचना कैसे हुई होगी? यह डर बहुत ज़्यादा बारीकी से हमें सिखाया जाता है, इशारों से फिल्मों, किताबों और बातचीत में।

सवाल: हाँ, बिलकुल, बल्कि हिन्दी में तो अक्सर साँप को भी 'कीड़ा' कहते हैं।

जवाब: ये शायद बहस का विषय हो सकता है। मैंने अपनी किताब में समझने की कोशिश की है कि हमारे प्रकृति के रिश्ते पर जाति, छुआछूत और अपवित्रता के खयाल का क्या असर पड़ता है। और साथ-ही-साथ, हमारे कीड़ों से रिश्ते पर। मिसाल के तौर पर, हिन्दू धार्मिक ग्रन्थों में *गरुड़ पुराण* में मृत्यु के बाद 'किरुमी भोजनम' नाम के एक खास किस्म के जहन्नुम का वर्णन मिलता है। इसमें आप एक कीड़ों से भरे खड्डे में पटक दिए जाते हैं जिसमें इल्लियाँ और कनखजूरे आपको धीरे-धीरे ज़िन्दा चबा डालते हैं। चुनांचे, कीड़े-मकोड़े नरक की तस्वीर दर्शाते हैं। प्राचीन ग्रन्थों-किताबों में ऐसे बयान इतने ज़्यादा मिलते हैं कि आप कीड़ों को हकीकत में भी ऐसे ही देखने लगेंगे। इसकी एक और मिसाल मिलती है जब नेतन्याहू बोलते हैं कि हम फिलिस्तीनियों को कीड़ों की तरह कुचल देंगे।

सवाल: और इस मुल्क में भी किसी ने 'दीमक' शब्द का ऐसे इस्तेमाल किया है। यह मुझे कार्लो गिंज़बर्ग की किताब *द चीज़ एंड द वर्म्स* की याद दिला रही है। यह सत्रवीं सदी के एक इतालवी 'मिलर' या चक्कीवाले की कहानी बताती है। उसका नाम मेनोकिओ था और वो यह मानने लगा था कि ये दुनिया वैसी ही प्रक्रियाओं से बनी होगी जो पनीर बनाने की प्रक्रिया में होती हैं। वो यह मानने लगा कि सृष्टि का निर्माण किण्वन या खमीर उठाने की प्रक्रिया के समान हुआ होगा। इसी वजह से रोमन कैथोलिक चर्च ने उसको सज़ा दी थी। ऐसे ही, खाद बनाने की प्रक्रिया में भी जिस तरह से मुर्दा सामग्री, दोबारा ज़िन्दा उपजाऊ खाद बन जाती है, इसमें भी हमें सृष्टि के निर्माण का बिम्ब मिलता है। अगर हम सिर्फ उनकी संख्या और वज़न पर भी जाएँ, तो ज़ाहिर है कि कीड़े-मकोड़ों के पास इस धरती पर हमसे बहुत ज़्यादा ताकत है। खैर, यह बताइए कि हमारी लोक-कथाओं में क्या आपको कीड़ों से जुड़ी कोई मज़ेदार कहानियाँ मिली हैं?

जवाब: राजस्थान में हर्षा नाम के एक नेचर गाइड ने मुझे 'कुम्हार ततैया' (पॉटर वास्प) के बारे में एक बड़ा दिलचस्प किस्सा सुनाया। यह उसने अपनी दादी से सुना था। कुम्हार ततैया ज़्यादातर 'जिओमीटर पतंगों' (पतंगों की एक नस्ल) की इल्ली खाती हैं। वो चिकनी मिट्टी इकट्ठा करती हैं और किसी कोने में एक कलशाकार घर बनाती हैं। फिर शिकार की इल्लियाँ इसमें डाली जाती हैं और साथ-साथ में अन्दर अण्डे देकर उसको बन्द कर दिया जाता है। ततैया के बच्चे अण्डे से निकलकर इल्लियों को खाते हैं और रूपान्तर करके ततैया की शकल में बाहर निकल आते हैं।

अब वहाँ की रिवायत बताती है कि कुम्हार ततैया तिलिस्मी जादू जानती हैं। वो भेस बदलने वाली अय्यर या चालबाज़ होती हैं। वो इतना जादू-टोना कर चुकी हैं कि खुद अपने बच्चे नहीं पैदा कर पातीं, लेकिन दूसरे जीवों के बच्चों को जादू से अपने में तब्दील कर लेती हैं। चुनांचे, वो इल्ली को दबोचकर उनके कानों में मंत्र पढ़ती हैं और उनको अपने तिलस्माती कलश में छुपा देती हैं। कुछ दिन बाद जब वह मंत्र सिद्ध हो जाता है तो वही इल्ली काया पलट कर ततैया बनकर कलश से बाहर आ जाती है!

सवाल: वाह, क्या बात है! और बताइए।

जवाब: क्या कीड़े-मकोड़े हमारे जज़्बातों या चेतना को और गहरा करते हैं? मैं इसपर भी शोध कर रहा हूँ। मनोविज्ञान में इसको 'psycho-synthesis' कहते हैं। हमारी हस्ती मुकम्मल महसूस करना चाहती है, नहीं तो हमें अधूरापन महसूस होता है और यह तकलीफदेह होता है। हमारी हस्ती के कुछ हिस्से ऐसे होते हैं जिनपर सिर्फ दूसरे जीवों का होना ही रोशनी डाल सकता है। दूसरे जीवों की हस्ती या जीवनशैली से हमें अपने बारे में सीखने को मिलता है। मिसाल के तौर पर, आश्चर्य का भाव। हमारे भीतर आश्चर्य का एहसास पैदा करने में तितलियों की बहुत बड़ी भूमिका रही है। और कितनी सारी शायरी और कविताएँ इन तितलियों से सींची गई हैं। मैं ऐसी चीज़ों पर गौर कर रहा हूँ कि अगर तितलियाँ नहीं होतीं तो क्या हम चकित होने के भाव को ऐसे महसूस कर पाते? चुनांचे, मुझे लगता है कि जैव विविधता के घटने के साथ-साथ हमारी चेतना को भी नुकसान पहुँचता है। हम भाँति-भाँति के एहसासों और मानी को खो रहे हैं।

एक और चीज़, हाल में मैं शहद इकट्ठा करने वाले कुरुम्बा समाज की कहावतें और पहेलियाँ पढ़ रहा था। उनकी एक पहेली है जिसमें वे कहते हैं कि 'गाय के पीछे दौड़ो, उनके थनों को दबाओ, और फिर दूध बिन गैय्या वापिस लाओ'। यह पहेली मधुमक्खी और शहद इकट्ठा करने के बारे में है।

सवाल: अचानक मुझे कुछ तेलुगु के पद याद आ रहे हैं। वो गूलर के पेड़ (*Ficus racemosa*) के बारे में है और उसमें कीड़े-मकोड़ों का हवाला है। ये पद कहते हैं: गूलर के फल को देखो तो, बाहर से चमकता, आकर्षित करता, जब खोल के अन्दर झाँको तो, कीड़ों-केंचुओं से भरा निकलता।' वे गूलर के फल से बताते हैं कि दिखावे पर मत जाओ, दिखावा धोखा दे सकता है।

जवाब: वेल्लापुथुर के एक किसान ने मुझे 'क्रिमसन रोज़' तितली के बारे में एक और कहानी सुनाई। DMK पार्टी के झण्डे की तरह क्रिमसन रोज़

तितली काली और लाल रंग की होती हैं। अब होता क्या है कि हर साल बारिश आने से पहले, पश्चिमी घाट की बारिश से बचने के लिए सैंकड़ों तितलियाँ पूरब की ओर प्रवास करती हैं। तो जब भी क्रिमसन रोज़ के झुण्ड बड़ी संख्या में प्रवास करते दिखते हैं तो लोग कहते हैं कि DMK पार्टी चुनाव जीतेगी।

सवाल: आपने अपनी अगली किताब का बड़ा दिलचस्प नाम रखा है। यह क्यों और कैसे चुना?

जवाब: किताब का नाम *इन्सेंडेन्स* है। थॉमस बेरी ने अपनी किताब *ड्रीम ऑफ़ द अर्थ* में इस शब्द को गढ़ा था। इसमें वे कहते हैं कि हमें अपनी आस्था को किसी बिला-वजूद की शय में रखने की बजाय इस जीती-जागती, ज़िन्दा दुनिया में रखना चाहिए। ज़्यादातर धर्म इसकी उल्टी बात कहते हैं। थॉमस बेरी ने इस दौर के लिए यह शब्द इजाद किया था। अक्सर आध्यात्मिक परम्पराओं में हम मोक्ष की बात करते हैं। इस शरीर और मन से मोक्ष पाना। थॉमस बेरी ने 'इन्सेंडेन्स' की बात की - दुनिया से मोक्ष पाने की बजाय, उसके भीतर घुस जाओ। उन्होंने उसके मर्म में पैठने की बात की। इन्सेंडेन्स 'मोक्ष' या 'ट्रांसेंडेन्स' का उल्टा है। उसका मतलब मर्म में पैठ जाना है। मेरे लिए यह दुनिया के छोटे नामालूम बाशिन्दों पर शिद्दत से गौर फरमाने का काम है। इन्सेंडेन्स वो भी है जो कीड़े-मकोड़े खुद करते हैं - पेड़ों की छाल, या किसी छेद या तंग दरार में घुस जाना। चीज़ों के केन्द्र तक पहुँचने की कोशिश करना, इस अर्थ में 'इन्सेंडेन्स' शब्द शायराना भी है और रूहानी भी।

फ़ज़ल: हम सब इस किताब के इन्तज़ार में हैं। बहुत शुक्रिया आपका।

यूवान: आपका भी।

यूवान एविस: हिन्दुस्तान के लेखक, प्रकृतिवादी, शिक्षक और एक्टिविस्ट। वर्तमान में, अबेकस मॉण्टेसरी स्कूल में 'फार्म, पर्यावरण और समाज' कार्यक्रम का समन्वय करते हैं। उन्होंने दो किताबें और कई लेख लिखे हैं। शायद सैंक्चुअरी के अब तक के सबसे कम उम्र के ग्रीन टीचर पुरस्कार प्राप्तकर्ता, युवान सबसे बेहतरीन, सबसे करिश्माई प्रकृति के शिक्षाविदों में से एक हैं। *बेल के पौधे और लाइम तितली की इल्लियाँ* लेख के लिए यूवान को 2017 में मद्रास नेचुरलिस्ट्स सोसाइटी से एम. कृष्णन नेचर राइटिंग अवॉर्ड मिला था। यूवान का काम उनके इंस्टाग्राम खाते a_naturalists_column पर देखा जा सकता है।

फ़ज़ल रशीद: ज़्यादातर बागबानी और पेड़-पौधों से जुड़े कामों में मसरूफ रहते हैं। भोपाल में निवास। सम्पर्क - fazalrashid@gmail.com

यह लेख *कथादेश* पत्रिका के अंक - जुलाई 2025 से साभार।